इकाई 1 मूल–पाठ और संदर्भ : एक मूल–पाठ का पठन एवं व्याख्या*

संरचना

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 हम मूल–पाठों का पठन क्यों करते हैं? हम मूल–पाठों का पुनर्पठन क्यों करते हैं?
1.3 व्याख्या की रणनीतियाँ
1.4 अर्थ एवं संदर्भ
1.5 व्याख्या की विभिन्न विचार पद्धतियाँ
  1.5.1 मार्क्सवादी
  1.5.2 सर्वसत्तात्मक
  1.5.3 मनोवैश्लेषिक
  1.5.4 नारीवादी
  1.5.5 स्ट्रॉउसवादी
  1.5.6 उत्तरआधुनिक
  1.5.7 कैंब्रिज 'नया इतिहास'
1.6 भ्रांतियाँ
  1.6.1 सिद्धांतों की भ्रांति
  1.6.2 संबद्धता की भ्रांति
  1.6.3 पूर्वप्रयोग की भ्रांति
1.7 सारांश
1.8 कुछ उपयोगी संदर्भ
1.9 अपनी प्रगति जाँचें अभ्यासों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप एक मूल–पाठ के पठन के महत्व को समझेंगे। यह स्पष्ट किया गया है कि एक मूल–पाठ के पठन में व्याख्या का कार्य क्यों अपरिहार्य है। एक मूल–पाठ के पठन और व्याख्या की प्रक्रिया को स्पष्ट करने के लिए मूल पाठ की भूमिका ओर जिस संदर्भ में उस मूल–पाठ की उत्पत्ति होती है इन्हें ध्यान में रखा जाता है। व्याख्या की विभिन्न विचार पद्धतियों की भी चर्चा की गई है। यह सब कुछ इस बात को समझने में सहायक होगा कि किस प्रकार राजनीतिक सिद्धांत मूल–पाठ के पठन और पुनर्पठन की क्रिया पर निर्भर करता है।

*डॉ. रश्मि गोपी, सहायक प्रोफेसर, मिरांडा हाउस, दिल्ली विश्वविद्यालय

1.1 प्रस्तावना

टेरेंस बॉल ने राजनीतिक सिद्धांत में एक मूल पाठ के पठन और व्याख्या की भूमिका के बारे में विचार करना, इस संबंध में विद्वानों द्वारा उठाए गए प्रश्नों के संदर्भ में, प्रारंभ किया। उसने राजनीति शास्त्रियों द्वारा उठाए गए कुछ मूलभूत प्रश्नों पर विशेष बल दिया। जो पहला प्रश्न उठाया गया, वह था : ऐसा क्यों था कि राजनीतिक सिद्धांत का विशेष अध्ययन करने वाले विद्वानों ने अतीत के 'महान् विचारकों, के बारे में लिखना जारी रखा? जो दूसरा सवाल उठाया गया, वह था : सीधे स्त्रोत तक पहुँचने और यह देखने के बजाय कि लेखक का क्या कहना है, हम क्यों इस या उस व्याख्या का आविष्कार करते हैं (या उसका पठन करते हैं) ? इस इकाई में हम इन सवालों का उत्तर देने के लिए एक मूल पाठ के पठन और व्याख्या के विभिन्न पहलुओं पर विचार–विर्मश करेंगे। अगले खण्ड में हम इस विषय पर चर्चा करेंगे कि हम मूल–पाठों का पठन क्यों करते हैं।

1.2 हम मूल–पाठों का पठन क्यों करते हैं? हम मूल–पाठों का पुनर्पठन क्यों करते हैं?

हम मूल पाठों का पठन समकालीन मामलों से जुड़ने के लिए करते हैं। हम स्वतंत्रता, न्याय और राजनीतिक सहभागिता के प्रश्नों से संबद्ध होते हैं। एक निश्चित समाज में समकालीन समस्याओं के समाधनों की खोज हमें मूल पाठों का पठन करने और उसमें से अर्थ खोज निकालने के लिए बाध्य करती है। पठन और पुनर्पठन की प्रक्रिया बहु–सांस्कृति समझ उपलब्ध करती है, विशेष रूप से 'गोरों द्वारा व्याख्या' के पार जाते हुए, जिसने एक शास्त्र के रूप में राजनीतिक सिद्धांत पर लम्बे समय से प्रभुत्व स्थापित किया हुआ है। गोरी चमड़ी वाले पुरूष विद्वानों की सीमाओं से परे विद्वानों के एक समूह से उत्पन्न इन नए पठन और व्याख्याओं में विभिन्न नस्लों, लैंगिकताओं, धर्म और प्रदेशों का स्वर शामिल हैनों इस प्रकार स्वयं राजनीतिक सिद्धांत के क्षेत्र का संवर्धन कर रहे हैं। चूंकि टेरेंस बॉल मूल पाठों के पठन के प्रश्न को सुलझाने से संबंधित अग्रगण्य विद्वानों में से एक है, आइए देखें कि इस क्रिया के बारे में वह क्या सोचता था। बॉल का विश्वास था कि पठन में व्याख्या की प्रक्रिया अपरिहार्य और अनिवार्य है। परन्तु व्याख्या की यह क्रिया एक घातक प्रक्रिया है। उदाहरण के लिए यदि एक व्यक्ति द्वारा प्रस्तुत एक निश्चित व्याख्या वर्तमान कानूनों या धार्मिक भावनाओं के विरुद्ध हो तो उसकी हत्या तक हो सकती है। अतः, व्याख्या की क्रिया का प्रयोग अत्यंत सतर्कता के साथ की जानी चाहिए। उसने व्याख्या के महत्व को मूलपाठ। लेखक के सच्चे अर्थ को समझने के एक प्रयास के रूप में देखा। बॉल ने व्याख्या के महत्व पर हाइडेगर के चिंतन का उल्लेख एक 'सत्तामूलक वर्ग' के रूप में किया। व्याख्या का संबंध अस्तित्व की प्रकृति के बारे में विचार करने से था। इसका संबंध एक विषय क्षेत्र या क्षेत्र में अवधारणाओं और वर्गों के बीच रिश्तों को दर्शाने से था। इसी प्रकार गेडेमर ने व्याख्या की क्रिया में 'सत्तामूलक अनिवार्यता' के रूप में महत्व दिया। गेडेमर के अनुसार, जिस विश्व में हम रहते हैं और जिन मूलपाठों का हम पठन करते हैं, उनमें पहले से ही अर्थ निवेशित होते हैं। हम अर्थों के एक विश्व में जन्म लेते हैं और जिस भाषा को हम बोलते हैं और जिन परम्पराओं को हम विरासत में प्राप्त करते हैं, उनकी मदद से हम विश्व को समझने करने की अपनी यात्रा एक निश्चित दृष्टिकोण से आरंभ करते हैं (एक निश्चित ऐतिहासिकता द्वारा प्रभावित) परन्तु समझने के अंत में

हेर–फेर भी कर सकते हैं। अतः, व्याख्या की क्रिया प्रासंगिक और गतिशील होती है। इस प्रक्रिया में हम जिनसे सहमत नहीं होते उनके साथ भी विचार के सामान्य सूत्रों को देखते हुए अपनी समझ के क्षितिज का विस्तार करते हैं। गेडेमर के लिए, व्याख्या की कला एक मनुष्य के जीवन को जीने की कला का एक अनिवार्य हिस्सा है।

टेरेंस बॉल ने इस तथ्य को स्पष्ट किया कि व्याख्याएँ एक निश्चित संदर्भ में पहले से ही समझे गए अर्थों पर आधारित होते हैं। बॉल ने एक व्यक्ति का उदाहरण दिय जिसके हाथ मं एक रक्त–रंजित हुरी है। एक ऐसे व्याख्याता के लिए जो उस निश्चित प्रसंग के बारे में जानता नहीं है वह उस व्यक्ति की व्याख्या एक हत्यारे के रूप में कर सकता है। परन्तु, यदि वह व्याख्याता यह जानता हे कि प्रसंग एक कसाई की दुकान का है तो एक रक्त रंजित हुरी लिए हुए उस व्यक्ति को एक कसाई समझा जाएगा। यहाँ दृश्य वही है, परन्तु उसकी व्याख्या कैसे की जाती है ये प्रसंग और पूर्व–निर्धारित अर्थों के बारे में जानकारी से जुड़ी होती है। टेरेंस बॉल के अनुसार, एक अच्छी व्याख्या बहुल प्रसंगों वाले भिन्न समूहों के लोगों के बीच अजनबीपन और उग्रता को घटाती है। परन्तु व्याख्याओं में गलतफहमियाँ उत्पन्न करने की गुंजाइश होती है। एक गलत व्याख्या लोगों के बीच भ्राँति और अव्यवस्था तटस्थ नहीं हो सकती। व्याख्या की प्रस्तुति हमेशा किसी उद्देश्य और पूर्व निर्धारित मान्यताओं वाले व्यक्ति द्वारा की जाती है।

अपनी प्रगति जाँचें अभ्यास 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।
ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) गेडेमर द्वारा प्रस्तुत की गई 'सत्तामूलक अनिवार्यता' की अवधारणा को स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

1.3 व्याख्या की रणनीतियाँ

क्वेंटिन स्किन्नर (जो केंब्रिज न्यू हिस्टोरियन्स विचारधारा से जुड़े हैं) के अनुसार एक मूलपाठ में निहित होता है और उस व्यक्ति द्वारा खोजा या पुनर्प्राप्त किया जाता है जो उसका पठन करता है। एक मूलपाठ का अर्थ एक ऐसी वस्तु है जो उसके लेखक द्वारा निर्मित होता है और लेखन की प्रक्रिया के दौरान उस मूलपाठ को दिया जाता है। स्किन्नर 'लेखकीय अभिप्राय' के सिद्धांत के प्रति वचनबद्ध है, अर्थात् लेखक का उद्देश्य अर्थ का निर्माण करना और उसे एक मूलपाठ को देने की प्रक्रिया लेखक द्वारा जानबूझकर अपनाई जाती है। मूलपाठों के लेखकों को अपने इरादों के बारे में और फलस्वरूप उनके द्वारा रचित मूलपाठों के अर्थ के संबंध में भी पूर्ण स्व–चेतना (और उन पर नियंत्रण) होता है। ये ऐसा उपागम है जो एक मूलपाठ के लेखक के दृष्टिकोण को विशेषाधिकार प्रदान करता हैं। इसका मानना है कि जो एक मूलपाठ को समझने का प्रयास करते हैं, वे उसे लिखते समय उसके लेखक के इरादों की अवहेलना नहीं कर सकते। व्याख्यात्मक प्रयास की सफलता के लिए यह एक अनिवार्य शर्त है।

इस दृष्टिकोण के विपरीत, उत्तर–संरचनावादियों का पारम्परिक दृष्टिकोण इस तथ्य पर बल देता है कि सब मूलपाठ के पाठकों द्वारा ही एकमात्र और अनन्य रूप से उसके अर्थ का निर्माण किया जाता है और उसे मूलपाठ को प्रदान किया जाता है। जेम्स रिस्सेर जैसे उत्तर–संरचनावादी के लिए, मूलपाठ 'अर्थ की एक मौलिक बहुलता के लिए खुला रहता है, जो वस्तुतः निश्चित रूप से पाठक द्वारा उत्पन्न किया जाना चाहिए।' एक मूलपाठ के पठन और व्याख्या के बारे में इस प्रकार की सोच संबंध 'लेखक की मृत्यु' के सिद्धांत से है (एक लेखक के लेखन की व्याख्या के निर्धारण में उसके इरादों और जीवनी संबंधी तथ्यों को विशेष महत्व नहीं दिया जाना चाहिए) और इसका श्रेय अक्सर मिशेल फूको, जिल दल्यूज़ और जॉक देरीदा जैसे उत्तर–संरचनावादी चिंतकों को दिया जाता है। यहाँ यह समझना महत्वपूर्ण है कि एक मूलपाठ के पठन, व्याख्या और विनियोजन के बीच सैद्धांतिक अंतर है। यह अलग बात है कि व्यवहार में वे सभी एक दूसरे से मेल खाते हों। पठन एक मूलपाठ को 'सार्थक' बनाने का एक प्रयास होता है। परन्तु यह वाक्यांश अर्थ की दृष्टि से जानबूझकर अस्पष्ट है और इस संभावना को छूट देना है कि विभिन्न पाठक एक ही मूलपाठ को विभिन्न तरीकों से समझने का प्रयास कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, पठन का संबंध कुछ अर्थ की 'खोज' के प्रयास से हो सकता है जो कि एक निश्चित मूलपाठ में पहले से ही विद्यमान माना जाता है। इसका संबंध एक मूलपाठ को एक निश्चित अर्थ 'प्रदान' करने के प्रयास अथवा उस पर एक निश्चित अर्थ आरोपित करने से भी हो सकता है। ये काफी भिन्न प्रकार के प्रयास हैं परन्तु दोनों पठन की धारणा की श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। अतः, एक निश्चित मूलपाठ के बारे में पाठकों द्वारा दिए गए किसी भी विवरण को उसका संभव या सत्याभासी पठन माना जा सकता है। किसी भी मूलपाठ का गलत पठन जैसी कोई चीज़ नहीं होती। एक मूलपाठ के पठन और उसकी व्याख्या के बीच यही महत्वपूर्ण अंतर होता हैं। व्याख्याएँ उस वस्तु तक पहुँचने का उद्देश्य रखती हैं जो व्याख्याकर्ता द्वारा मूलपाठ में ही अन्तर्निहित माना जाता है। ऐसा अनुमान लगाया जाता हैं कि यह 'महत्वपूर्ण वस्तु' उस विचारधीन मूलपाठ का अर्थ है। एक मूलपाठ की व्याख्या करने का अभिप्राय उसके अर्थ को पुनर्प्राप्त करने या उसे शायद खोजने का प्रयास होता है और प्रयास सफल या असफल हो सकता है। वे लोग जो 'एक मूलपाठ की व्याख्या' कर चुकाने का दावा करते हैं, उनका विश्वास होता है कि वे एक मूलपाठ के अर्थ के संबंध में 'सत्य' को खोज रहे हैं। यह अपेक्षा की जाती है कि पठन, जो व्याख्याएँ भी होती हैं, सही या गलत; उचित या अनुचित हो सकती हैं। उनका मूल्यांकन एक मूलपाठ के अर्थ के सही या उचित विवरण के अधिक निकट या दूर होने के रूप में किया जा सकता है। अतः, सैद्धांतिक रूप से, मूलपाठों की विपरीत व्याख्याओं का मूल्यांकन महत्वपूर्ण आनुभाविक प्रमाण से पुनरावेदन के आधार पर किया जा सकता है और व्याख्याकर्ताओं के बीच विवादों का समाधन बुद्धिसंगत तर्क और वाद–विवाद द्वारा हो सकता है। एक मूलपाठ के अर्थों से अधिक दूर होने वाली व्याख्याओं को मूलपाठों की भ्रांतव्याख्या कहा जा सकता है, भले ही हम उनके भ्रांत पठन की बात न कर पाते हों। क्वेंटिन स्किन्नर ये छवि प्रस्तुत करते हैं कि उनकी राय में एक मूलपाठ का वैध रूप से पठन का एकमात्र तरीका है उसकी व्याख्या करना। एक व्याख्या से भिन्न एक विनियोजन एक मूलपाठ का एक चयनात्मक पठन होता है। एक मूलपाठ का एक विनियोजन प्रस्तुत करने का उद्देश्य किसी को एक निश्चित तरीके से क्रिया करने के लिए राज़ी करना हो सकता है। इस प्रक्रिया में, एक मूलपाठ के लेखक के विचारों को विनियोजकों द्वारा लिया जाता है और उन्हें अपने ही उद्देश्यों के लिए प्रयोग किया जाता है। ऐसे पठनों में विनियोजक के स्वार्थ और चिंताएँ प्रतिबिंबित होते हैं, न कि लेखक के। जो मूलपाठों को अपना बना लेते हैं, वे उनमें से ऐसे

विचार चुराने के लिए तैयार होते हैं जिन्हें वे उपयोगी पाते हैं और कभी–कभी उन्हें अपने स्वयं के विचारों के रूप में और कभी–कभी उस विचाराधीन मूलपाठ के लेखक के विचारों के रूप में विश्व को प्रस्तुत करते है। जब विनियोजक लेखक के नाम का प्रयोग करते हैं तब वे उस क्षेत्र में लेखक के ज्ञान प्राधिकार का अपने लाभ के लिए इस्तेमान करते हैं और समानांतर रूप से लेखक द्वारा इन विचारों का प्रयोग जिस रूप में किया गया और समझा गया, उसकी अवहेलना करते हुए, विनियोजक इन विचारो के अर्थ को विकृत कर देते हैं। विनियोजकों की न तो लेखक के इरादों में और न ही सच्चाई में दिलचस्पी होती है। उनके पठन इतने लापरवाह, पक्षपाती, आंशिक, चयनात्मक, असंतुलित और एक तरफा होते हैं कि इन्हें एक मूलपाठ की व्याख्याएँ कहना अनुचित होगा। फिर भी, ये स्वीकार करना पड़ेगा कि व्यवहार में यह स्थापित करना कठिन हो सकता है कि एक मूलपाठ का एक पठन उसकी एक अवैध व्याख्या है या उसका एक विनियोजन।

इस बहस में कि मूलपाठ महत्वपूर्ण है या संदर्भ, टेरेंस बॉल का मानना है कि दोनों ही महत्वपूर्ण हैं। उसके लिए, ये जानने के लिए भी कि लेखक द्वारा "अनैच्छिक" क्या है, हमें "लेखक का इरादा" जानना होगा। साथ ही, एक मूलपाठ का उसके लेखक से परे एक जीवन होता है, एक पाठक भी एक मूलपाठ का अर्थ चिन्हित करता है (लेखक के ही संदर्भ में और एक परिवर्तित संदर्भ में)। मूलपाठ का पठन दो परिकल्पनाओं का विलयन होता है, अर्थात् लेखक की दृष्टि और पाठक की दृष्टि। इस विलयन बिंदु को गेडेमर द्वारा "क्षितिजों का समेकन" कहा गया है। बॉल के लिए, ये समेकन ज्ञानवर्धक और भ्रामक, दोनों हो सकता है। मूलपाठ द्वारा तय की गई लेखक से पाठक तक की दूरी की विशालता के प्रतिबिंबन के कारण ज्ञानवर्धक। भ्रामक इसलिए कि लेखक और पाठक की दृष्टियों का एक मिलनबिंदु होना आवश्यक नहीं है। ऐलन ब्रॉयन, बॉल से सहमत है ज बवह इस बात पर बल देता है कि लेखकीय इरादा और मूलपाठ का अपना जीवन, दोनों ही महत्वपूर्ण हैं। ब्रायन लॉक का उदाहरण देता है जिसकी कृति 'टू ट्रीटाइज़' के कारण उसे नारीवाद का आरंभिक अग्रदूत माना जा सकता है। इस उपाधि से लॉक को आश्चर्य हो सकता है परन्तु ये सोचना गलत होगा कि लॉक के लेखों ने उत्तरवर्ती नारीवादी शैक्षिक जगत और सक्रियतावाद को कभी उत्प्रेरित नहीं किया। इस दृष्टिकोण को अपनाने में कुछ भी गलत या अवैध नहीं है कि एक उद्देश्य के लिए निर्मित तर्कों का आगे चलकर किसी बिल्कुल ही अन्य प्रयोजन के लिए उपयोग में लाया जाए। ब्रायन द्वारा उल्लेख किया गया एक अन्य उदाहरण है आंतोनियों ग्राम्शी की कृति। साम्यवादी दल का 'मॉडर्न प्रिंस' के रूप में पुर्नवर्णन करने में, ग्राम्शी ने मैक्यावली की एक निष्ठुर और सर्वशक्तिमान राजा की धारणा को रूपांतरित और उसका रचनात्मक प्रयोग किया। ग्राम्शी के पठन से, मैक्यावली के प्रिंस के समान, साम्यवादी दल को सुयोग्य लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए छल–कपट, चालाकी, धोखा और हिंसा के प्रयोग के लिए तैयार होना पड़ेगा। 'प्रिंस' की जगह 'दल' को प्रतिस्थापित करते हुए, ग्राम्शी मैक्यावली के तर्कों को एक अधिक आधुनिक और स्पष्टतया भिन्न संदर्भ में रूपांतरित करने में सक्षम हुआ। अतः, ब्रायन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि लेखक का इरादा और एक मूलपाठ का जीवन अपने आप में महत्वपूर्ण हैं।

एक मूलपाठ की व्याख्या के दो अनिवार्य अवयव होते हैं (क) बोधगम्यता, अर्थात् पाठकों के मानदंड और (ख) वैधता, अर्थात् पाठकों की स्वीकृति। यदि कोई व्यक्ति अपने पाठकों की भाषा, धारणाओं और परिस्थितियों की दृष्टि से मानदंडों का ध्यान नहीं रखता तो उस स्थिति में लेखन को पाठकों द्वारा अपनी रचना को अस्पष्ट या अवैध समझे जाने का जोखिम उठाना पड़ता हैं। राजनीतिक सिद्धांत और राजनीतिक सिद्धांत के अन्तर्गत

मूलपाठ महत्वपूर्ण होते हैं जिनमें तर्क और भाषा, दोनों के ही विषयों पर ही समान रूप से विचार किया जाता है। राजनीतिक सिद्धांत के मूलपाठ, राजनीतिक क्रिया और दार्शनिक जाँचं–पडताल, दोनों के विषयों का वहन करते हैं। ये राजनीतिक नवाचार और वैचारिक परिवर्तन की ओर ले जाता हैं। आंशिक रूप से राजनीतिक सिद्धांत की यह मिश्रित प्रकृति है जो इतिहास या उदनकी किसी निश्चित घटना की व्याख्या को इतना कठिन और अध्ययन और चिंतन करने के लिए इतना उपयोगी बना देती है।

अपनी प्रगति जाँचें अभ्यास 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) मूलपाठ विषयक और सांदर्भिक पठन से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) व्याख्या के दो अनिवार्य अवयवों की व्याख्या करें।

.....

.....

.....

.....

.....

1.4 अर्थ एवं संदर्भ

संदर्भों के बदलने के साथ वर्थ बदलते हैं। उदाहरण के लिए फिल्मर की 'पेट्रिआरका' (1680) जिसकी यह धारणा थी कि सभी राजा आदम के उत्तराधिकारी होते हैं और निरंकुश तथा दैवीय शासक होते हैं, जिसे जॉन लॉक की पुस्तक 'टू ट्रटाइज़िज ऑफ गवर्नमेंट' (1689) ने चुनौती दी। लॉक ने कहा कि निरंकुश राजतंत्र स्वीकार्य नहीं हैं और ये साबित करना संभव नहीं है कि सभी राजा आदम के उत्तराधिकारी होते हैं। उस स्थिति में भी जिसमें फिल्मर और हॉब्स ने राजनीतिक दायित्व के बारे में चर्चा की, शासक की प्रकृति भिन्न थी। फिल्मर के लिए, राजनीतिक दायित्व राजा के दैवत्व के नाम पर न्यायसंगत था। हॉब्स के लिए, राजनीतिक दायित्व व्यक्तियों की आत्मरक्षा के लिए मनुष्यों के बीच किए गए समझौते के नाम पर न्यायसंगत था। चूंकि तथ्य गतिशील होते हैं, कोई भी पठन निर्दोष नहीं होता। उन्हें अन्य पाठक के पठनों के माध्यम से निथारा और रंगा जाता है। अपने स्वयं प्राप्त मूल्यों और व्याख्याओं की मान्यता के नियमित पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। सिद्धांतों की बहुलता हो सकती है। लाकाटोस ने इसे 'त्रिकोणीय लड़ाई' कहा है।

सत्य की खोज मान्यकरण और मिथ्याकरण की एक निरंतर प्रक्रिया होती है। परन्तु ये आवश्यक नहीं है कि सत्य की खोज की प्रक्रिया हमेशा निष्पक्षता के साथ की जाए। जब सत्य की खोज की प्रक्रिया निष्पक्षता पर निर्भर करती है, तब उस उत्पाद को विद्वत्ता कहा जाता है। जब सत्य की खोज की प्रक्रिया पक्षपाती उद्देश्य पर आधारित होती है तो उस उत्पाद को राजनीति कहा जाता है। टेरेंस बॉल के लिए, विद्वत्ता राजनीति नहीं है और राजनीति विद्वत्ता नहीं है।

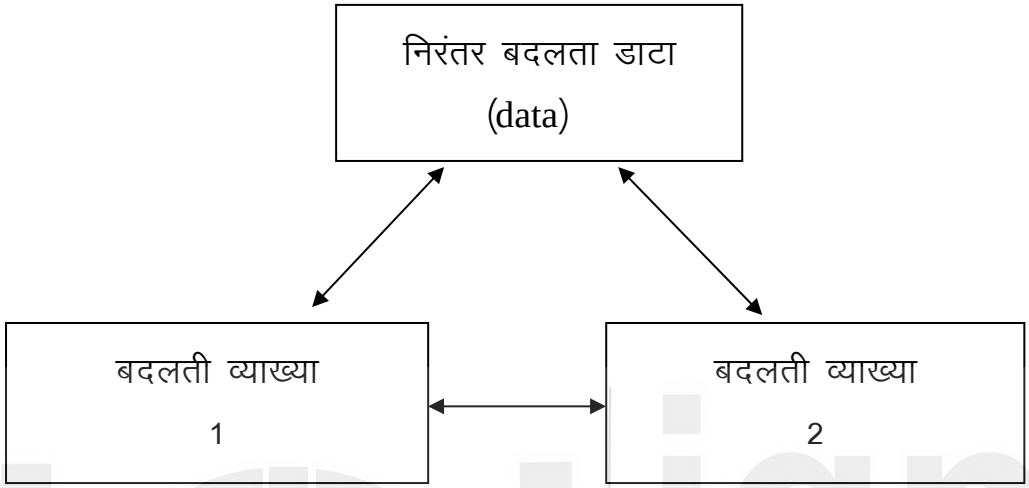

अतः, हम ये निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि लेखन की उत्पत्ति और पाठकों द्वारा प्राप्ति, दोनों ही संमान रूप से महत्वपूर्ण होते हैं। 'लेखकीय इरादे' महत्वपूर्ण होते हैं परन्तु वे अपने आप में साध्य नहीं होते। इरादों को बाद की अवस्था में भी आविष्कृत या पुनर्आविष्कृ त किय जा सकता है। किसी भी मूलपाठ के अनैच्छिक परिणाम भी हो सकते हैं (लिखते समय लेखक द्वारा अप्रत्याशित)। पठन एक समस्या–निवारण क्रिया होती है जिसमें पाठक मूलपाठ की विषय–वस्तु को समकालीन मुद्दों से जोड़ता है। मूल पाठ केवल तब सजीव होते हैं जब आँख बंद करके उनकी पूजा करने के बजाय, उनका ध्यानपूर्वक और समीक्षात्मक रूप से पुनर्मूल्यांकन किया जाता है। व्याख्या का कोई एकमात्र तरीका सभी मुद्दों को संबोधित नहीं कर सकता। ये संदर्भ पर निर्भर करता है। व्याख्यात्मक समस्याएँ किसी भी विचारधारा में देखी जा सकती है। प्रत्येक लेखक और पाठक की अपनी स्वयं की क्षमताएँ होती हैं और उनके अनुसार प्रत्येक मूलपाठ के प्रति न्याय करेगा।

अपनी प्रगति जाँचें अभ्यास 3

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) विद्वत्ता और राजनीति के बीच में क्या अंतर है?

.....

.....

.....

.....

.....

1.5 व्याख्या की विभिन्न विचार पद्धतियाँ

मनुष्य अपने चौगिर्द संदर्भों और मूलपाठों की निरंतर व्याख्या करते हैं। राजनीतिक सिद्धांत के विद्यार्थी राजनीतिक मूलपाठों की प्रतिद्वंद्वी व्याख्याओं का पठन और निर्णय करते हैं। एक ऐसे विषय के रूप में जो अपने शास्त्रीय ग्रंथों के "शब्दों" की बल्कि उनके "अर्थों" की भी व्याख्या की आवश्यकता होती है। ऐसी व्याख्या लम्बे समय पहले भिन्न संदर्भों में दिए गए वक्तव्यों को समझने के लिए और उन्हें वर्तमान के लिए सुपरिचित और सुलभ बनाने के लिए भी अनिवार्य है। जैसा कि आरंभ में ही कहा जा चुका है, व्याख्या कभी–कभी गलतफहमियाँ उत्पन्न कर सकती है और एक मूलपाठ के विश्लेषण में एक तटस्थ दृष्टिकोण नाम की कोई वस्तु नहीं होती। वह इस साधारण तथ्य का समर्थन अवश्य करता हैं कि व्याख्या के बिना कोई ज्ञान नहीं हो सकता।

नीचे व्याख्या की विभिन्न विचार पद्धतियों की चर्चा की गई है।

1.5.1 मार्क्सवादी

मार्क्सवादी उपागम 'वर्ग' और 'उसकी असमानताओं' को विश्लेषण का केन्द्र बनाता है। मार्क्सवादियों के लिए, पारम्परिक विचार वर्गीय असमानताओं की दोषारोपणात्मक सच्चाई को छिपाते हैं और समाज की निष्पक्षता और न्यायसंगति के बारे में झूठी तस्वीरें प्रस्तुत करते हैं। ऐसे में, मूलपाठ विषयक व्याख्या का कार्य गुलाबी मुखौटे के पीछे छिपे कठोर सत्य को प्रकट करना होता है। यहाँ लक्ष्य मुख्यधारा दृष्टिकोण द्वारा निर्मित भ्रांति की संरचना को मिटाना और छिपे हुए सच्चे सामाजिक और आर्थिक यथार्थ को प्रकट करना होता है। क्रॉफोर्ड ब्रॅफ मैकफर्सन की 'दि पोलिटिकल थ्योरी ऑफ पोज़ेसिव इंडिविजुअलिज़्म' (1962) एक महत्वपूर्ण मार्क्सवादी व्याख्या है जो लॉक को पूँजीवाद के एक असाधरण ढंग से निपुण प्रचारक के रूप में प्रस्तुत करती हैं। मैकफर्सन लॉक द्वारा 'सेकंड ट्रीटाइज़' में निजी सम्पत्ति के बारे में चर्चा को – जहाँ वह सम्पत्ति को प्रकृति का वो हिस्सा घोषित करना है जो व्यक्ति अपने ही श्रम के साथ मिश्रित करता है – निजी सम्पत्ति की संस्था के औचित्य के रूप में समझता हैं। मार्क्सवादी सभी सिद्धांतों को वैचारिक मुखौटों के रूप में देखते हैं। ये स्पष्ट करना संभव नहीं है कि उनके अपने सिद्धांत को कैसे और क्यों छूट दी जानी चाहिए। प्रधान रूप से मार्क्सवादी व्याख्याएँ अन्य सत्ता संरचनाओं पर आधारित पहचानों (सिवाय वर्ग के) जैसे जाति, लिंग, लैंगिकताएँ, धर्म, प्रांत और नस्ल के प्रभाव को अनदेखा करती हैं। जब वे अन्य पहचानों को मान्यता देती भी हैं तो यथार्थ के निर्माण में उन्हें गौण दर्जे में रखा जाता है।

1.5.2 सर्वसत्तात्मक

फासीवाद और साम्यवाद के उदय ने आधुनिक सर्वसत्तात्मकता की दार्शनिक जड़ों की जाँच–पड़ताल को प्रोत्साहित किया। एक बार खोजने पर ऐसा प्रतीत होता है कि ये जड़ें सभी जगह उपस्थित होती है। प्लेटोका दार्शनिक राजा, मैक्यावली का निष्ठुर राजकुमार, हॉब्स का सर्वशक्तिमान संप्रभु/लेवाइथान और रूसों का सर्व–बुद्धिमान विधायक, सभी 20 वीं सदी के सर्वसत्तात्मक शासकों के अग्रदूत प्रतीत होते है। इस परिप्रेक्ष्य की एक सुप्रसिद्ध रचना है कार्ल पॉपर की 'दि ओपन सोसाइटी एण्ड इट्स एनिमीज़' (1945)। 'दि फिलॉसफी ऑफ राइट' की प्रस्तावना में हेगेल की इस टिप्पणी का कि 'जो तर्कसंगत है, वो यथार्थ है और जो यथार्थ है, वो तर्कसंगत है, का पॉपर अर्थ लगाता है कि वह सब कुछ न्यायसंगत ठहराया जा रहा है जो अब वास्तविक (या 'यथार्थ') है उसका अस्तित्व

आवश्यकता के कारण होता है और इस प्रकार वह युक्तिसंगत और अच्छा ("तर्कसंगत") होता है। हेगेल द्वारा उसके समय में जिस आध सर्वसत्तात्मक प्रशियन राज्य का अस्तित्व था, उसे अपना दार्शनिक अनुमोदन देते हुए देखा गया है। परन्तु करीब से देखने पर पॉपर की भ्रांति व्याख्या प्रकट होती है। हेगेल 'विर्कलिक' शब्द का प्रयोग करता है जिसका अनुवाद 'यथार्थ' है और इसका अर्थ 'साधित क्षमता' है और न कि जो 'वास्तविक' है जैसा कि पॉपर मानता है। हेगेल की टिप्पणी का अर्थ होगा : "जो तर्कसंगत होता है वो वह होता है जो अपनी क्षमता को पूर्ण रूप से यथार्थ बनाता है; और वह जो पूर्ण रूप से अपनी क्षमता को यथार्थ बनाता है, वह तर्कसंगत होता है।" अतः, ये सब कुछ जो यथार्थ है (जिसमें से सर्वसत्तात्मक प्रशिया एक था) उसका अहितकारी समर्थन नहीं है। ये उदाहरण एक मूलपाठ के विनियोजन (वैचारिक और भाषा, दोनों ही स्तरों पर) के खतरे पर विशेष बल देता है जिसकी हम पहले चर्चा कर चुके हैं।

1.5.3 मनोवैश्लेषिक

मनोविश्लेषण के जनक सिग्मंड फ्रॉइड ने तर्क दिया कि हमारी सभी क्रियाएँ इच्छाओं और भय द्वारा संचालित होती हैं जिनके बारे में हम शायद सचेत रूप से अवगत भी नहीं होते (अचेतना की स्थिति का महत्व)। यह उपागम इस विचार को प्रस्तुत करता है कि मनोविश्लेषक व्याख्याओं को राजनीतिक सिद्धांत समेत सभी प्रकार के मूलपाठों पर लागू किया जा सकता है। इस प्रकार का व्यवहार मैक्यावली, बर्क, लूथर और गाँधी जैसे विचारकों के साथ किया गया है। इस उपागम का एक उदाहरण है ब्रूस मेज़लिश की पुस्तक 'जेम्स एण्ड जॉन स्टूअर्ट मिल' (1975)। मिल की 'ऑन लिबर्टी' को एक निजी निवेदन और अपने अत्यंत सख्त पिता से स्वतंत्रता की घोषणा के रूप में सूत्रबद्ध किया गया है। मिल ने शायद चेतन होकर इसकी कल्पना न की हो, परन्तु उसकी अचेतन इच्छाओं ने उसकी रचना को रूप दिया। उसका हैरियत नामक एक विवाहिता स्त्री के साथ एक प्रेमप्रसंग भी था। ये देखते हुए कि उसकी माँ का नाम भी हैरियत था, यह संयोग मनोविश्लेषक व्याख्या में ज्ञान ईडीपस कॉप्लेक्स के साथ पूर्ण रूप से ठीक बैठता है। प्रत्यशित रूप से मेज़लिश इसका पूरा लाभ उठाता है। मनोविश्लेषक व्याख्याएँ यद्यपि कभी–कभी गहरी पहुँच वाली होने पर भी, काल्पनिक, प्रभावात्मक और गैर–मिथ्यायोग्य होती हैं। यह उपागम मूलपाठ से ध्यान भी हटाता है और उसे लेखक पर केंद्रित करता है जो मूलपाठ विषयक व्याख्या की दिशा में किसी भी प्रयास का मुश्किल से उचित तरीका है।

1.5.4 नारीवादी

ये उपागम लिंग को विश्लेषण का केंद्र बिंदु बनाता है और राजनीतिक सिद्धांत पर विचार करने के लिए उस अनुकूल अवस्थिति का उपयोग करता है। इस उपागम का सार सूज़न ओकिन के इस वक्तव्य में परिलक्षित है, "राजनीति दर्शन की महान् परम्परा में शामिल हैं... पुरूषों द्वारा, पुरूषों के लिए, और पुरूषों के बारे में लेख"। इस दरार ने शास्त्रीय रचनाओं के नारीवादी पुनर्पठनों और पुनर्समीक्षा के लिए दबाव डाला है। इस उपागम का पहला दौर 1960 के दशक में आरंभ हुआ। मेरी वॉलस्टोनक्राफ्ट, एम्मा गोल्डमैन, बेन्थम, मिल और एंगल्स को उनके द्वारा लिंग के प्रश्न की ओर ध्यान देने और उसका समादर करने के लिए चुना गया। इसके बाद, एक दूसरा, अधिक उग्र दौर आया जिसने राजनीतिक सिद्धांत के महानों की रचनाओं में नारीद्वेष को उजागर करने का प्रयास किया, जिनमें वे भी शामिल थे जिनका पहले दौर में सम्मान किया गया था। उदाहरण के लिए, कैरोल पेटमैन ने अपनी कृति 'दि सेक्शुअल कॉट्रैक्ट' में इस पर बल दिया था कि सामाजिक

समझौता किस प्रकार एक भ्रात्रीय समझौता था और कल्याणकारी राज्य एक पितृसत्तात्मक संस्था थी। तीसरे दौर ने पुरूषों के लिए अनिवार्य बनाए गए नागरिक सद्‌गुणों की आलोचना की – सत्ता की भूख, प्रतिस्पर्धात्मकता, तर्कसंगति। इसने सार्वजनिक/निजी के बीच भेद को पलट दिया और राजनीति के सार्वजनिक क्षेत्र की तुलना में परिवार के निजी क्षेत्र की श्रेष्ठता की घोषणा की। नारीवादी व्याख्याओं पर उच्च वर्गीय, गोरी त्वचा वाली और शिक्षित नारियों का प्रभुत्व रहा है। विभिन्न नारियों की आवाज़ को प्रकट करना (चूंकि नारियों का वर्ग एकाश्म नहीं है) व्याख्या की इस विचार पद्धति के लिए एक चुनौती हैं।

1.5.5 स्ट्रॉउसवादी

इस उपागम की उत्पत्ति लियो स्ट्राउस की रचनाओं में पाई जाती है जिसने प्लेटो और अन्य प्राचीन और पूर्व–उदारवादी काल के चिंतकों की रचनाओं में राजनीति के शाश्वत सत्य को स्थित करने का प्रयास किया। इन 'परिशुद्ध' रचनाओं की तुलना आधुनिक उदारवादी चिंतकों की 'उदार' रचनाओं से की गई। स्ट्राउस ने कट्टरपन की हिंसक हवाओं के सामने मानकीय बुनियादों के कमज़ोर हो जाने पर शोक व्यक्ति किया। नात्ज़ी जर्मनी के एक यहूदी शरणार्थी के रूप में उसके अनुभवों ने उसके उपागम को प्रभावित किया। स्ट्राउस और उसके अनुयायियों ने उदारवाद, सापेक्षवाद, ऐतिहासिकवाद, और विज्ञानवाद की उत्पत्ति को खोज निकालने और उनके विकारों का निदान करने का प्रयास किया। पूर्व–उदारवादी काल के मूलपाठों का विवेकपूर्ण ढंग से पुनर्पठन और उनके सच्चे अर्थ के गूढ़वाचन के द्वारा समाधान ढूँढ़े जाने थे। स्ट्राउसवादी उपागम ने एक मूलपाठ के 'बाहरी' और 'गूढ़' सिद्धांतों के बीच भेद किया। 'बाहरी' देश का जनता के लिए होना और रेखाओं के बीच सन्निहित और उनके पीछे हुए "गूढ़' सिद्धांत का गूढ़वाचन करना। यह उपागम किसी प्रकार के अंतरंगी ज्ञान पर निर्भर करता है, जो केवल उन्हें प्राप्त होता है जो दीक्षित होते हैं जो क्रमशः अदीक्षित को निराशाजनक अज्ञानी के रूप में अस्वीकार कर देते है। इसी प्रकार, ये केवल यह प्रस्तुत करता है कि गूढ़ सिद्धांत बाहरी सिद्धांत से मेल नहीं खाता।

1.5.6 उत्तरआधुनिक

उत्तर आधुनिकतावाद की उत्पत्ति भव्य वृतांतों की असफलताओं से होती है। ये एक परिप्रेक्ष्य है जिसे अनेक भिन्न, यहाँ तक कि असदृश चिंतकों ने साझा किया है। उत्तरआधुनिकतावाद विश्व की असंगत और अबोधगम्य प्रकृति पर बल देता है और मानव स्थिति में निरंतरता और एकता को प्राप्त करने के किसी भी प्रयास का विरोध करना है। ये रेखीय प्रगति के विचार को एक समूह की शक्ति में दूसरों पर प्रभुत्व को आगे बढ़ाना मात्र मानते हुए उसे अस्वीकार कर देता हैं। इस उपागम के सबसे प्रभावशाली विद्वानों में मिशेल फूको है। वह उन तरीकों का परीक्षण करता है जिनके द्वारा मनुष्यों का 'सामान्यीकरण' होता है, अर्थात् अपने ही दमन में (सत्ता द्वारा) उन्हें स्वैच्छिक साझेदार बनाया जाता है। इसके अन्तर्गत वर्तमान के परिप्रेक्ष्य से मूलपाठों का पुनर्पठन और फिर नई धुरियों के अनुसार उन्हें पुनःनिर्मित करना और पुनस्थापित करना ताकि ये प्रकट किया जा सके कि किसने दमन के प्रति योगदान दिया और किसने उसका विरोध किया। इस उपागम का एक अन्य लोकप्रिय विद्वान है जॉक देरिदा। उसका उद्देश्य ज्ञाता/ज्ञान, वस्तु/प्रतिनिधित्व, मूलपाठ/व्याख्या, सही/गलत जैसे विभिन्न द्विचर. विपरीतों या द्विभाजनों का परीक्षण करते हुए सत्य के दावों की स्वेच्छाचारिता को 'विखण्डित' या अनावृत करना और आलोचना करना है। जो सत्य के रूप घोषित किया जाता हैं, मूलपाठ समेत,

सच/सच्चाइयों का एक प्रतिनिधित्व मात्र होता है। कोई भी संस्करण श्रेष्ठता का दावा नहीं कर सकता। उसी हैसियत से, सभी व्याख्याएँ अनिवार्य रूप से अनिश्चित होती हैं। व्याख्याओं की अनिर्धर्यता पर आग्रह एक अत्यंत दोषदर्शी सोच होती है जो हमारे ज्ञान की उन्नति नहीं करती है। परन्तु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह हैं कि ये मूलपाठों में प्रचार और असत्य को तर्कसंगत बना देती है अथवा, कम से कम इनके बीच भेद नहीं कर पाती है और इस प्रकार, उसे नैतिक और ज्ञान–मीमांसा की दृष्टि से असंतोषजनक बना देती हैं।

1.5.7 कैंब्रिज 'नया इतिहास'

केंब्रिज'नए इतिहासकार' मूलपाठ विषयक व्याख्या को उन ऐतिहासिक दृष्टि से परिवर्ती समस्याओं को प्रकट करने के रूप में देखते हैं जिनके लिए निश्चित दार्शनिकों ने निश्चित उत्तर प्रस्तावित किए और इस बात से इनकार करते हैं कि शाश्वत समस्याएँ होती हैं। अर्थ को समझने के लिए ये अनिवार्य होता है कि हम उस समस्या को समझे जिसे संबोधित किया जा रहा हैं। पीटर लैस्लेट लॉक की 'टू ट्रीटाइज़स' (1960) की अपनी प्रस्तावना में, इस पुस्तक को उसके राजनीतिक और ऐतिहासिक संदर्भ में पुनः स्थापित करता है। ये यह भी दर्शाता है कि ये ग्रंथ, जो जानकारी थी, उससे लगभग एक दशक पहले लिखा जा चुका था। इस प्रकार लॉक की बाद वाली पुनर्व्याख्याओं के लिए मार्ग प्रशस्त किया गया। ऐतिहासिक अन्वेषण की इस पद्धति को प्रबल तरीके से प्रोत्साहित किया गया है। मूलपाठ उपागमों को अपर्याप्त रूप से ऐतिहासिक होने के लिए अस्वीकार किया गया हैं। इस उपागम के लिए, राजनीतिक सिद्धांत एक प्रकारः की राजनीतिक क्रिया है। इसका अभिप्राय चेतावनी देना, राज़ी करना, आलोचना करना और डराना होता हैं। राजनीतिक सिद्धांतकार हमेशा से प्रचार और प्रबोधन से जुड़े रहे हैं। मूलपाठ विषयक व्याख्या का कार्य मूलग्रंथों को ऐतिहासिक संदर्भों में पुनर्स्थापित करना और उन प्रश्नों को समझना होता हैः जिनके उत्तर के रूप मं मूलपाठों को प्रस्तुत किया गया था।

अतः हम देख पाए कि कोई एक अकेली पद्धति उन उत्तरों को उपलब्ध कराने के लिए पर्याप्त नहीं होगी जिन्हें हम ढूँढ़ते हैं। ऐसे उपागमों की बहुलता, जो उन प्रश्नों की श्रृंखला पर बोझ न डालें जिन्हें हम पूछ सकते हैं, बेहतर है। इस बहुलवादी उपागम को अपनाने में बौद्धिक, राजनीतिक और भाषाई संदर्भों को भी ध्यान में रखना होगा। साथ ही हमें ये तथ्य भी याद रखना होगा कि एक बार प्रकाशित होने के बाद मूलग्रंथों का अपना महत्व अत्यधिक बढ़ जाता है। केवल इस पर ध्यान केंद्रित करना कि एक निश्चित मूलपाठ में लेखक का इरादा क्या था, उस मूलपाठ के बारे में अन्य चिंतकों और पाठकों का जो कहना था उसकी उपेक्षा करना है। व्याख्यात्मक अन्वेषण समस्यामूलक और गतिशील होते हैं। हम संदेह दूर करने के लिए मूलपाठों का सहारा लेते हैं। ये संदेह कहीं से भी उत्पन्न हो सकते हैं परन्तु उनके व्याख्यात्मक समाधानों का औचित्य कठोर विद्वत्ता के मानदंड़ों द्वारा सिद्ध किया जाना चाहिए। शास्त्रीय कृतियों को पुनर्व्याख्याओं और पुनर्मूल्यांकनों के माध्यम से जीवित रखा जा सकता हैं।

अपनी प्रगति जाँचें अभ्यास 4

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) एक मूलपाठ के पठन में व्याख्या के महत्व को स्पष्ट करें। व्याख्या की किस विचार पद्धति ने आपको सबसे अधिक प्रभावित किया है? संक्षेप में उसकी विशेषताओं का वर्णन करें।

.....

.....

.....

.....

.....

1.6 भ्रांतियाँ

राजनीतिक सिद्धांतकारों का नियत कार्य शास्त्रीय मूलपाठ के एक मानक का अध्ययन और व्याख्या करना रहा हैं। शास्त्रीय मूलपाठों में 'सार्वभौमिक विचारों' के रूप में एक 'कालातीत ज्ञान' का समावेश होता है। शास्त्रीय मूलपाठों के अध्ययन के फलस्वरूप क्वेंटिन स्किन्नर का मानना है कि इन कालातीत तत्वों के अन्वेषण से हम प्रत्यक्ष रूप से सीखते और लाभान्वित होते हैं। ये मूलपाठ चिरस्थायी प्रासंगिकता से युक्त होते हैं। इन मूलपाठों को समझने का सर्वोत्तम तरीका ये होगा कि इस पर ध्यान केंद्रिय किया जाए कि प्रत्येक मौलिक अवधारणाओं के बारे में इनमें से प्रत्येक ग्रंथ का क्या कहना है। शास्त्रीय मूलपाठों में नैतिकता, राजनीति, धर्म और सामाजिक जीवन के प्रश्न सन्निहित होते हैं। इसका अर्थ ये है कि इन्हें ऐसे पढ़ा जाए जैसे मानों इनकी रचना एक समकालीन व्यक्ति ने की हो। केवल उनके तर्कों पर ध्यान केंद्रित करते हुए और चिरस्थायी मुद्दों के बारे में वे हमसे जो कहना चाहते हैं। उनका परीक्षण करते हुए। उन्हें अपने संदर्भों से हटाना उनके कालातीत विवेक को भूल जाना होगा और उसके द्वारा उनके अध्ययन के महत्व और उद्देश्य से संपर्क खोना होगा। जहाँ शास्त्रीय मूलपाठों के पठन की बात आती है तो वहाँ कुछ निश्चित भ्रांतियाँ विद्यमान रही हैं। निम्नलिखित अनुच्छेदों में हम इनमें से कुछ की चर्चा करेंगे।

1.6.1 सिद्धांतों की भ्रांति

सर्वाधिक आग्रहपूर्ण भ्रांति तब उत्पन्न होती है जब इतिहासकार ये अपेक्षा रखता है कि प्रत्येक शास्त्रीय लेखक को उसका विषय समझे जाने वाले प्रत्येक शीर्षक पर किसी सिद्धांत का प्रतिपादन करता हुआ पाया जाएगा। ये सभी अनिवार्य मुद्दों पर एक निश्चित लेखक के सिद्धांतों को 'खोज निकालने' के ऐसे प्रतिमान के प्रभाव में आने से (चाहे कितने ही अचेतन तरीके से) केवल एक खतरनाक छोटा कदम दूर होता है। इस भ्रांति को 'सिद्धांतों की भ्रांति' कहा जाता है और इसके अजेक रूप होते हैं। पहला खतरा ये है कि बिखरी हुई और आकस्मिक टिप्पणियों को विषय के अनिवार्य प्रसंगों के बारे में सिद्धांतों में परिवर्तित कर दिया जाता है। (क) बौद्धिक जीवनियाँ जिनमें व्यक्तिगत चिंतकों के विविध विचारों पर ध्यान केंद्रित होता है और (ख) 'विचारों के इतिहास' जिनमें अनेक विविध चिंतकों द्वारा उल्लिखित विचारों पर ध्यान केंद्रित होता है, दोनों ही इस प्रकार की भ्रांति से असुरक्षित होते हैं।

'बौद्धिक जीवनियों' के संबंध में, एक निश्चित दृष्टिकोण या सिद्धांत का श्रेय एक लेखक को केवल किसी पारिभाषिक शब्दावली की आकस्मिक समानता के आधार पर दिया जा सकता है, भले ही सैद्धांतिक तौर पर उसका परिभाषित करने का आशय न रहा हो।

उदाहरण के लिए, मार्सिलियस ऑफ पादुआ को शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का श्रेय दिया जाता है क्योंकि एक शासक की कार्यकारी भूमिका पर कुछ टिप्पणियों की तुलना एक संप्रभुत्वसंपन्न जनता की विधायी भूमिका से हुई। परन्तु इस सिद्धांत की उत्पत्ति को उसकी मृत्यु के लगभग दो शताब्दियों के बाद रोमन्स तक खींचा गया और इसका पूर्ण विकास केवल 17 वीं शताब्दी में संभव हुआ। इसी तरह, साधारण वक्तव्यों से एक सिद्धांत को अत्यधिक स्वेच्छा से उद्धत किया जा सकता है अथवा पढ़ा जा सकता है। संभवतः लेखक ने केवल सिद्धांत को उल्लिखित किया हो (यहाँ तक कि उसमें विश्वास भी किया हो) लेकिन उसमें से एक सिद्धांत को उच्चरित करने की मंशा के बिना। उदाहरण के लिए, कुछ बिखरी हुई टिप्पणियों के आधार पर 'राजनीतिक न्यास' के 'सिद्धांत' का श्रेय जॉन लॉक को दिया जाना है।

दूसरे उदाहरण में, अर्थात् 'विचारों के इतिहासों' के संबंध में, एक निश्चित सिद्धांत के एक आदर्श प्रकार को अपने स्वयं के एक इतिहास से युक्त एक हस्ती, लगभग एक जीव के रूप में प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति होती है। इस प्रकार का वस्तुकरण सिद्धांत के गैर–इतिहास के एक रूप का निर्माण करता है जहाँ उसका और उसके लेखक का इतिहास मिटा दिया जाता है। उदाहरण के लिए, शक्तियों के पृथक्करण के संबंध में मार्सिलियस से लेकर मॉटेक्यू तक इस सिद्धांत के विकास के इतिहास का विलोपन पाया जाता है। इसे एक स्वीकृत सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। साथ ही कुछ निश्चित लेखकों में या निश्चित समय के दौरान एक विचार की घटना और उद्भाव के बारे अंतहीन बहस उत्पन्न किए जाते हैं। सिद्धांत की भ्रांति का अनुकरण करने में ये संभावना हो सकती है कि एक इतिहासकार, एक सिद्धांतकार को एक विषय के समुचित सिद्धांत, उसकी बिखरी हुई टिप्पणियों में से उपलब्ध कर सकता है। इतिहासकार एक शीर्षक के बारे में एक लेखक के विचारों के बारे में अटकले लगा सकता है जिन्हें लेखक ने गंभीरता से न लिया हो। एक इतिहासकार, एक ऐसे सिद्धांत को जिसे वह विषय का अभिन्न हिस्सा मानता हो, उसका एक लेखक द्वारा छोड़े जाने पर उसकी निंदा तक कर सकता है। उदाहरण के लिए 'जन मत के प्रभाव' को 'छोड़ने' के लिए प्लेटो के 'रिपब्लिक' और 'परिवार एवं नस्ल के बारे में सभी संदर्भों' को छोड़ने के लिए लॉक के 'सेकंड ट्रीटाइज़' की आलोचना की जाती है। एक लेखक द्वारा पर्याप्त रूप से व्यापक/व्यवस्थित न होने के लिए, एक इतिहासकार उसकी आलोचना कर सकता है। यहाँ मान्यता ये है कि लेखक अपने लेखन के व्यवस्थित होने की मंशा रखता था। उदाहरण के लिए मैक्यावली के 'प्रिंस' पर 'अत्यधिक रूप से एक पक्षीय और अव्यवस्थित' होने के लिए अक्सर प्रहार किया जाता है।

1.6.2 संबद्धता की भ्रांति

इतिहासकार के पूर्वाग्रह और अपेक्षाएँ भी एक दूसरे प्रकार की भ्रांति को उत्पन्न करते हैं,संबद्धता की एक भ्रांति। पहली ऐतिहासिक असंगति। एक मूलपाठ में एक संबद्धता को, जो उसमें वास्तव में उपस्थित भी न हो, दरारों को पाटने के द्वारा, ढूंढने या उपलब्ध तक कराने की प्रवृत्ति होती है। उदाहरण के लिए, गाँधी के 'हिन्द स्वराज' के पठन में, इतिहासकार और राजनीति शास्त्री उनके सभी लेखों के आर–पार एक संबद्धता लाने का प्रयास करते हैं। जबकि स्वयं गाँधी ने कभी भी इस प्रकार की संबद्धता का प्रयास नहीं किया। इसी प्रकार, उसके लेखों के आर–पार संबद्धता के अभाव के लिए कार्ल मार्क्स की आलोचना की जाती है। आलोचना करते समय इतिहासकार और विद्वान ये भूल जाते हैं कि कुछ विचार एक लेखक की जीवन अवधि के दौरान विकसित होते और सुधरते हैं और ऐसी परिस्थितियों में विचारों में विच्छेद होना स्वाभाविक है।

संबद्धता की भ्रांति की ये मान्यता होती है कि एक लेखक की रचना में से उच्चतर संबद्धता के संदेश को उदृत करने के हित में, स्वयं लेखक द्वारा अपने कार्य के बारे में अपने इरादों के वक्तव्यों को नगण्य समझना, अथवा संमूर्ण कृतियों तक को जो लेखक की प्रणाली की संबद्धता को दुर्बल कर देती हैं, नगण्य समझना बिल्कुल उचित होता है। उदाहरण के लिए, लॉक जिसने आरंभ में एक अधिनायकतंत्रीय दृष्टिकोण का समर्थन करने का प्रयास किया, उसे संबद्धता की खातिर, एक उदारवादी राजनीतिक सिद्धांतकार के रूप में चित्रित किया जाता है। इतिहासकारों के लिए ये भी सामान्य है कि एक लेखक की कृति में अंतर्विरोधों को ऐसी बाधाओं के रूप में देखना जिनका संबद्ध प्रणाली में ठीक बैठने के लिए हिसाब दिया जाना चाहिए।

1.6.3 पूर्वप्रयोग की भ्रांति

पूर्वप्रयोग की भ्रांति की विशेषता एक कृति का वर्णन है, जो उसके महत्व से प्रभावित है और इस प्रकार से कि वह लेखक वास्तव में क्या कहना चाहता था इसके बारे में विश्लेषण के लिए कोई स्थान नहीं छोड़ता। ऐसा अक्सर होता है जब इतिहासकार जिस कृति का विश्लेषण कर रहा होता है, उसकी दिलचस्पी कृति के पूर्वव्यापी महत्व में होती है।

अपनी प्रगति जाँचें अभ्यास 5

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।
ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) शास्त्रीय मूलपाठों की परिभाषा दें। सिद्धांत की भ्रांति का विवेचन करें।

.....

.....

.....

.....

1.7 सारांश

एक मूलपाठ के पठन, व्याख्या और विनियोजन के बीच संकल्पनात्मक अंतर की चर्चा के बाद हमारे लिए ये स्पष्ट हो जाता है कि व्यवहार में एक मूलपाठ को समझने की प्रक्रिया के अंदर, सभी तीनों तरीकों का एक साथ विलय हो जाता है। इसी प्रकार, इस बहस की जाँच पडताल करने के बाद कि एक मूलपाठ के लेखन में लेखक का उद्देश्य महत्वपूर्ण है या एक मूलपाठ का स्वतंत्र जीवन महत्वपूर्ण है, हमने ये समझा कि एक मूलपाठ का जीवन अप्रत्याशित होता है। तो कभी एक मूलपाठ अपने लेखक के अभिप्रायों के लिए जाना जाता है तो कभी एक मूलपाठ अपने लेखक के अभिप्रायों के लिए जाना है तो कभी एक मूलपाठ को अपने पाठकों के द्वारा अपने अर्थ और जीवन की प्राप्ति होती है। इस अध्याय में इस बात पर बल दिया गय है कि व्याख्या की क्रिया एक मूलपाठ को समझने के लिए अनिवार्य और अपरिहार्य होता है। हमने व्याख्या की विभिन्न विचार पद्धतियों की चर्चा से प्रत्येक पद्धति की अद्वितीयता को जाना और समानांतर रूप से ये समझा कि कोई भी पद्धति हर समय के लिए सभी समस्याओं का उत्तर देने की स्थिति में नहीं होती। कोई भी पद्धति अपने आप में आदर्श और संपूर्ण नहीं होती। इन उपागमों के विवेकपूर्ण उपयोग

द्वारा ही एक मूलपाठ की बेहतर समझ को विकसित किया जा सकता है। इस अध्याय के अंत में हमने इस विषय पर चर्चा की कि एक शास्त्रीय मूलपाठ किसे कहा जा सकता है और किस प्रकार इन शास्त्रीय मूलपाठों को समझने में कुछ भ्रांतियों को विकसित किया जाता है।

1.8 कुछ उपयोगी संदर्भ

- बॉल. टेरेंस. (1995). रीअप्रेजिंग पोलिटिकल थ्योरी. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस. ऑक्सफोर्ड.
- बॉल. टेरेंस. (2004). "हिस्ट्री एण्ड द इंटरप्रेटेशन ऑफ टेक्स्ट्स" *हैंड़बुक ऑफ पॉलिटिकल थ्योरी.* (सं.). जेरल्ड एफ. गाउस एण्ड चंद्रन कुकथास. लंदन. सेज पब्लिकेशन्स. पृ. 18–30.
- बर्न्स. टोनी. (2011). "इंटरप्रेटिंग एंड अप्रोप्रियेटिंग टेक्स्ट्स इन द हिस्ट्री ऑफ पॉलिटिकल थॉट : क्वेंटिन स्किन्नर एण्ड पोस्टस्ट्रकचरलिज़्म", *कंटेम्पोररी पॉलिटिकल थ्योरी.* ग्रंथ 10. पृ. 313–331.
- स्किन्नर. क्वेंटिन. (1969). "मीनिंग एण्ड अंडरस्टैंडिंग इन द हिस्ट्री ऑफ आइडियास". *हिस्ट्री एण्ड थ्योरी* 8 (1). वेस्लेयन यूनिवर्सिटी. वाइली. पृ. 3–53.

1.9 अपनी प्रगति जाँचें अभ्यासों के उत्तर

अपनी प्रगति जाँचें अभ्यास 1

1) गेडेमर के अनुसार, जिस विश्व में हम रहते हैं और जिन मूलपाठों का हम पठन करते हैं, उनमें पहले से ही अर्थ निवेशित होते हैं। उसके लिए व्याख्या की क्रिया सांदर्भिक और गतिशील होती है। उसके अनुसार, व्याख्या की कला के माध्यम से हम एक मनुष्य के जीवन को जीने की कला को सीखते हैं।

अपनी प्रगति जाँचें अभ्यास 2

1) मूलपाठ विषयक पठन में लेखक के अभिप्राय के प्राथमिकता दी जाती है। एक मूलपाठ का अर्थ एक ऐसी वस्तु है जिसका निर्माण उसके लेखक द्वारा किया जाता है और लिखने की प्रक्रिया के दौरान उसके लेखक द्वारा किया जाता है और लिखने की प्रक्रिया के दौरान एक मूलपाठ को दिया जाता है। अर्थ का निर्माण करना और उसे एक मूलपाठ को प्रदान करने की ये प्रक्रिया लेखक द्वारा जानबूझकर निभाई जाती है। सांदर्भिक पठन में प्राथमिक महत्व उस संदर्भ को दिया जाता है जिसमें मूलपाठ को मौलिक रूप से लिखा गया था और उस प्रसंग को जिसमें पाठक उसका पठन करता है।

2) एक मूलपाठ की व्याख्या के दो अनिवार्य अवयव हैं (क) बोध–गम्यता अर्थात्, पाठकों के मानदंड और (ख) वैधता, अर्थात् पाठकों की स्वीकृति

अपनी प्रगति जाँचें अभ्यास 3

1) जब सत्य की खोज की प्रक्रिया निष्पक्षता पर निर्भर करती है, तब उस उत्पाद को विद्वत्ता कहा जाता है। जब सत्य की खोज की प्रक्रिया पक्षपाती उद्देश्य पर आधारित होती है तो उस उत्पाद को राजनीति कहा जाता है।

अपनी प्रगति जाँचें अभ्यास 4

1) राजनीतिक सिद्धांत को न केवल इन शास्त्रीय ग्रंथों के "शब्दों" की बल्कि उनके "अर्थों" की भी व्याख्या की आवश्यकता होती है। ऐसी व्याख्या लम्बे समय पहले भिन्न संदर्भों में दिए गए वक्तव्यों को समझने के लिए और उन्हें वर्तमान के लिए सुपरिचित और सुलभ बनाने के लिए भी अनिवार्य है। व्याख्या की जिस किसी विचार पद्धति ने आपको सर्वाधिक प्रभावित किया हो, उसका कारण स्पष्ट करें और उसकी मूल विशेषताओं को प्रस्तुत करें।

अपनी प्रगति जाँचें अभ्यास 5

1) शास्त्रीय मूलपाठों में 'सार्वभौमिक विचारों' के रूप में एक 'कालातीत ज्ञान' का समावेश होता है। ये मूलपाठ चिरस्थायी प्रासंगिकता से युक्त होते हैं। सिद्धांत की भ्रांति : सर्वाधिक आग्रहपूर्ण भ्रांति तब उत्पन्न होती है जब इतिहासकार ये अपेक्षा रखता है कि प्रत्येक शास्त्रीय लेखक को उसका विषय समझे जाने वाले प्रत्येक शीर्षक पर किसी सिद्धांत का प्रतिपादन करता हुआ पाया जाएगा।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY